'उसे तलाक दे दूंगा।'

'हाँ, यही मैं भी चाहती हूँ। तो मैं तुम्हारे साथ चलूँगी, अभी, इसी दम। शापूर से अब मेरा कोई सम्बन्ध नहीं है।'

कावसजी को अपने दिल में कम्पन का अनुभव हुआ। बोले, %लेकिन, अभी तो वहाँ कोई तैयारी नहीं है।'

'मेरे लिए किसी तैयारी की जरूरत नहीं। तुम सबकुछ हो। टैक्सी ले लो। मैं इसी वक्त चलूँगी।'

कावसजी टैक्सी की खोज में पार्क से निकले। वह एकान्त में विचार करने के लिए थोड़ा-सा समय चाहते थे, इस बहाने से उन्हें समय मिल गया। उन पर अब जवानी का वह नशा न था, जो विवेक की आँखों पर छाकर बहुधा हमें गड्ढे में गिरा देता है। अगर कुछ नशा था, तो अब तक हिरन हो चुका था। वह किस फन्दे में गला डाल रहे हैं, वह खूब समझते थे। शापूरजी उन्हें मिट्टी में मिला देने के लिए पूरा जोर लगायेंगे, यह भी उन्हें मालूम था। गुलशन उन्हें सारी दुनिया में बदनाम कर देगी, यह भी वह जानते थे। ये सब विपत्तियाँ झेलने को वह तैयार थे। शापूर की जबान बन्द करने के लिए उनके पास काफी दलीलें थीं। गुलशन को भी स्त्री-समाज में अपमानित करने का उनके पास काफी मसाला था। डर था, तो यह कि शीरीं का यह प्रेम टिक सकेगा या नहीं। अभी तक शीरीं ने केवल उनके सौजन्य का परिचय पाया है, केवल उनकी न्याय, सत्य और उदारता से भरी बातें सुनी हैं। इस क्षेत्र में शापूरजी से उन्होंने बाजी मारी है, लेकिन उनके सौजन्य और उनकी प्रतिमा का जादू उनके बेसरोसामान घर में कुछ दिन रहेगा, इसमें उन्हें सन्देह था। हलवे की जगह चुपड़ी रोटियाँ भी मिलें तो आदमी सब्र कर सकता है। रूखी भी मिल जायँ, तो वह सन्तोष कर लेगा; लेकिन सूखी घास सामने देखकर तो ऋषि-मुनि भी जामे से बाहर हो जायेंगे। शीरीं उनसे प्रेम करती है; लेकिन प्रेम के त्याग की भी तो सीमा है। दो-चार दिन भावुकता के उन्माद में यह सब्र कर ले; लेकिन भावुकता कोई टिकाऊ चीज तो नहीं है। वास्तविकता के आघातों के सामने यह भावुकता कै दिन टिकेगी। उस परिस्थिति की कल्पना करके कावसजी काँप उठे। अब तक वह रनिवास में रही है। अब उसे एक खपरैल का कॉटेज मिलेगा, जिसकी फर्श पर कालीन की जगह टाट भी नहीं; कहाँ वरदीपोश नौकरों की पलटन, कहाँ एक बुढ़िया मामा की संदिग्ध सेवाएँ जो बात-बात पर भुनभुनाती है, धमकाती है, कोसती है। उनका आधा वेतन तो संगीत सिखाने वाला मास्टर ही खा जायगा और शापूरजी ने कहीं ज्यादा कमीनापन से काम लिया, तो उनको बदमाशों से पिटवा भी सकते हैं। पिटने से वह नहीं डरते। यह तो उनकी फतह होगी; लेकिन शीरीं की भोग-लालसा पर कैसे विजय पायें। बुढ़िया मामा जब मुँह लटकाये आकर उसके सामने रोटियाँ और सालन परोस देगी, तब शीरीं के मुख पर कैसी विदग्ध विरक्ति छा जायेगी ! कहीं वह खड़ी होकर उनको और अपनी किस्मत को कोसने न लगे। नहीं, अभाव की पूर्ति सौजन्य से नहीं हो सकती। शीरीं का वह रूप कितना विकराल होगा।

सहसा एक कार सामने से आती दिखायी दी। कावसजी ने देखा शापूरजी बैठे हुए थे। उन्होंने हाथ उठाकर कार को रुकवा लिया और पीछे दौड़ते हुए जाकर शापूरजी से बोले, 'आप कहाँ जा रहे हैं ?'

'यों ही जरा घूमने निकला था।'

'शीरींबानू पार्क में हैं, उन्हें भी लेते जाइए।'

'वह तो मुझसे लड़कर आयी हैं कि अब इस घर में कभी कदम न रखूँगी।'

'और आप सैर करने जा रहे हैं ?'

'तो क्या आप चाहते हैं, बैठकर रोऊँ ?'

'वह बहुत रो रही हैं।'

'सच !'

'हाँ, बहुत रो रही हैं।'

'तो शायद उसकी बुद्धि जाग रही है।'

'तुम इस समय उन्हें मना लो, तो वह हर्ष से तुम्हारे साथ चली जायँ।'

'मैं परीक्षा करना चाहता हूँ कि वह बिना मनाये मानती है या नहीं।'

'मैं बड़े असमंजस में पड़ा हुआ हूँ। मुझपर दया करो, तुम्हारे पैरों पड़ता हूँ। '

'जीवन में जो थोड़ा-सा आनन्द है, उसे मनावन के नाटय में नहीं छोड़ना चाहता।'

कार चल पड़ी और कावसजी कर्तव्यभ्रष्ट-से वहीं खड़े रह गये। देर हो रही थी। सोचा कहीं शीरीं यह न समझ ले कि मैंने भी उसके साथ दगा की,लेकिन जाऊँ भी तो क्योंकर ? अपने सम्पादकीय कुटीर में उस देवी

को प्रतिष्ठित करने की कल्पना ही उन्हें हास्यास्पद लगी। वहाँ के लिए तो गुलशन ही उपयुक्त है। कुढ़ती है, कठोर बातें कहती है, रोती है, लेकिन वक्त से भोजन तो देती है। फटे हुए कपड़ों को रफू तो कर देती है, कोई मेहमान आ जाता है, तो कितने प्रसन्न-मुख से उसका आदर-सत्कार करती है, मानो उसके मन में आनन्द-ही-आनन्द है। कोई छोटी-सी चीज भी दे दी, तो कितना फूल उठती है। थोड़ी-सी तारीफ करके चाहे उससे गुलामी करवा लो। अब उन्हें अपनी जरा-जरा सी बात पर झुँझला पड़ना, उसकी सीधी-सी बातों का टेढ़ा जवाब देना, विकल करने लगा। उस दिन उसने यही तो कहा, था कि उसकी छोटी बहन की साल-गिरह पर कोई उपहार भेजना चाहिए। इसमें बरस पड़ने की कौन-सी बात थी। माना वह अपना सम्पादकीय नोट लिख रहे थे, लेकिन उनके लिए सम्पादकीय नोट जितना महत्त्व रखता है,क्या गुलशन के लिए उपहार भेजना उतना ही या उससे ज्यादा महत्त्व नहीं रखता ? बेशक, उनके पास उस समय रुपये न थे, तो क्या वह मीठे शब्दों में यह नहीं कह सकते थे कि डार्लिंग ? मुझे खेद है, अभी हाथ खाली है, दो-चार रोज में मैं कोई प्रबन्ध कर दूंगा। यह जवाब सुनकर वह चुप हो जाती। और अगर कुछ भुनभुना ही लेती तो उनका क्या बिगड़ जाता था ? अपनी टिप्पणियों में वह कितनी शिष्टता का व्यवहार करते हैं। कलम जरा भी गर्म पड़ जाय, तो गर्दन नापी जाय। गुलशन पर वह क्यों बिगड़ जाते हैं ? इसीलिए कि वह उनके अधीन है और उन्हें रूठ जाने के सिवा कोई दण्ड नहीं दे सकती। कितनी नीच कायरता है कि हम सबलों के सामने दुम हिलायें और जो हमारे लिए अपने जीवन का बलिदान कर रही है, उसे काटने दौड़ें।

सहसा एक तांगा आता हुआ दिखायी दिया और सामने आते ही उस पर से एक स्त्री उतर कर उनकी ओर चली। अरे ! यह तो गुलशन है। उन्होंने आतुरता से आगे बढ़कर उसे गले लगा लिया और बोले, 'तुम इस वक्त यहाँ कैसे आयीं ? मैं अभी-अभी तुम्हारा ही खयाल कर रहा था।'

गुलशन ने गद्गद कण्ठ से कहा, %तुम्हारे ही पास जा रही थी। शामको बरामदे में बैठी तुम्हारा लेख पढ़ रही थी। न-जाने कब झपकी आ गयी और मैंने एक बुरा सपना देखा। मारे डर के मेरी नींद खुल गयी और तुमसे मिलने चल पड़ी। इस वक्त यहाँ कैसे खड़े हो ? कोई दुर्घटना तो नहीं होगयी? रास्ते भर मेरा कलेजा धड़क रहा था।'

कावसजी ने आश्वासन देते हुए कहा, %मैं तो बहुत अच्छी तरह हूँ।'

'तुमने क्या स्वप्न देखा ?'

'मैंने देखा जैसे तुमने एक रमणी को कुछ कहा, है और वह तुम्हें बाँध कर घसीटे लिये जा रही है।'

'कितना बेहूदा स्वप्न है; और तुम्हें इस पर विश्वास भी आ गया ? मैं तुमसे कितनी बार कह चुका कि स्वप्न केवल चिन्तित मन की क्रीड़ा है।'

'तुम मुझसे छिपा रहे हो। कोई न कोई बात हुई है जरूर। तुम्हारा चेहरा बोल रहा है। अच्छा, तुम इस वक्त यहाँ क्यों खड़े हो ? यह तो तुम्हारे पढ़ने का समय है।'

'यों ही, जरा घूमने चला आया था।'

'झूठ बोलते हो। खा जाओ मेरे सिर की कसम।'

'अब तुम्हें एतबार ही न आये तो क्या करूँ ?'

'कसम क्यों नहीं खाते ?'

'कसम को मैं झूठ का अनुमोदन समझता हूँ।'

गुलशन ने फिर उनके मुख पर तीव्र दृष्टि डाली। फिर एक क्षण के बाद बोली,'अच्छी बात है। चलो, घर चलें।'

कावसजी ने मुस्कराकर कहा, 'तुम फिर मुझसे लड़ाई करोगी।'

'सरकार से लड़कर भी तुम सरकार की अमलदारी में रहते हो कि नहीं ?'

'मैं भी तुमसे लड़ूँगी; मगर तुम्हारे साथ रहूँगी।'

'हम इसे कब मानते हैं कि यह सरकार की अमलदारी है।'

'यह तो मुँह से कहते हो। तुम्हारा रोआँ-रोआँ इसे स्वीकार करता है। नहीं तो तुम इस वक्त जेल में होते।'

'अच्छा, चलो, मैं थोड़ी देर में आता हूँ।'

'मैं अकेली नहीं जाने की। आखिर सुनूँ, तुम यहाँ क्या कर रहे हो ?'

कावसजी ने बहुत कोशिश की कि गुलशन वहाँ से किसी तरह चली जाय; लेकिन वह जितना ही इस पर जोर देते थे, उतना ही गुलशन का आग्रह भी बढ़ता जाता था। आखिर मजबूर होकर कावसजी को शीरीं और शापूर के झगड़े का वृत्तान्त कहना ही पड़ा; यद्यपि इस नाटक में उनका अपना जो भाग था उसे उन्होंने बड़ी होशियारी से छिपा देने की चेष्टा की।

गुलशन ने विचार करके कहा, 'तो तुम्हें भी यह सनक सवार हुई !'

कावसजी ने तुरन्त प्रतिवाद किया, 'कैसी सनक ! मैंने क्या किया ? अब यह तो इंसानियत नहीं है कि एक मित्र की स्त्री मेरी सहायता माँगे और मैं बगलें झाँकने लगूं !'

'झूठ बोलने के लिए बड़ी अक्ल की जरूरत होती है प्यारे, और वह तुममें नहीं है; समझे ? चुपके से जाकर शीरींबानू को सलाम करो और कहो कि आराम से अपने घर में बैठें। सुख कभी सम्पूर्ण नहीं मिलता। विधि इतना घोर पक्षपात नहीं कर सकता। गुलाब में काँटे होते ही हैं। अगर सुख भोगना है तो उसे उसके दोषों के साथ भोगना पड़ेगा। अभी विज्ञान ने कोई ऐसा उपाय नहीं निकाला कि हम सुख के काँटों को अलग कर सकें ! मुफ्त का माल उड़ानेवाले को ऐयाशी के सिवा और सूझेगी क्या ? अगर धन सारी दुनिया का विलास न मोल लेना चाहे तो वह धन ही कैसा ? शीरीं के लिए भी क्या वे द्वार नहीं खुले हैं, शापूरजी के लिए खुले हैं ? उससे कहो शापूर के घर में रहे, उनके धन को भोगे और भूल जाय कि वह शापूर की स्त्री है, उसी तरह जैसे शापूर भूल गया है कि वह शीरीं का पति है। जलना और कुढ़ना छोड़कर विलास का आनन्द लूटे। उसका धन एक-से-एक रूपवान्, विद्वान् नवयुवकों को खींच लायेगा। तुमने ही एक बार मुझसे कहा, था कि एक जमाने में फ्रांस में धनवान् विलासिनी महिलाओं का समाज पर आधिपत्य था। उनके पति सबकुछ देखते थे और मुँह खोलने का साहस न करते थे। और मुँह क्या खोलते ? वे खुद इसी धुन में मस्त थे। यही धन का प्रसाद है। तुमसे न बने, तो चलो, मैं शीरीं को समझा दूं। ऐयाश मर्द की स्त्री अगर ऐयाश न हो तो यह उसकी कायरता 'है लतखोरपन है !'

कावसजी ने चकित होकर कहा, 'लेकिन तुम भी तो धन की उपासक हो ?'

गुलशन ने शर्मिन्दा होकर कहा, %यही तो जीवन का शाप है। हम उसी चीज पर लपकते हैं, जिसमें हमारा अमंगल है, सत्यानाश है। मैं बहुत दिन पापा के इलाके में रही हूँ। चारों तरफ किसान और मजदूर रहते थे। बेचारे दिन-भर पसीना बहाते थे, शाम को घर जाते। ऐयाशी और बदमाशी का कहीं नाम न था। और यहाँ शहर में देखाती हूँ कि सभी बड़े घरों में यही रोना है। सब-के-सब हथकंडों से पैसे कमाते हैं और अस्वाभाविक जीवन बिताते हैं। आज तुम्हें कहीं से धन मिल जाय, तो तुम भी शापूर बन जाओगे, निश्चय।'